ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्...
राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

तिथि–10 दिसम्बर 2017
सृष्टि संवत्- १, ९६, ०८, ५३, ११८
युगाब्द-५११८, अंक-९२, वर्ष-१०
पौष मास, विक्रमी २०७४ (दिसम्बर 2017)
मुख्य संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य'
कार्यकारी संपादक : आचार्य सतीश
सम्पर्क सूत्रः 9350945482
Web: www.aryanirmatrisabha.com
E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com

ऋषि दयानन्द

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

त्वमस्य पारे रजसो व्योमनः स्वभूत्योजा अवसे धृषन्मनः। चकृषे भूमिं प्रतिमानमोजसोऽपः स्वः परिभूरेष्या दिवम्॥ -ऋ० १। ४। १४। २

व्याख्यान-हे परमैश्वर्यवन् परात्मन्! [(रजसः व्योमनः पारे)] आकाश लोक के पार में तथा भीतर [(स्वभूत्योजा धृषन्मनः)] अपने ऐश्वर्य और बल से विराजमान होके दुष्टों के मन का धर्षण–तिरस्कार करते हुए सब जगत् तथा विशेष हम लोगों के (अवसे) सम्यक् रक्षण के लिये (त्वम्) आप सावधान हो रहे हो। इससे हम निर्भय होके आनन्द कर रहे हैं। किञ्च (दिवम्) परमाकाश (भूमिम्) भूमि तथा (स्वः) सुखविशेष मध्यस्थ लोक इन सबों को (ओजसः) अपने सामर्थ्य से ही रचके यथावत् धारण कर रहे हो। (परिभूः एषि) सब के ऊपर वर्त्तमान और सब को प्राप्त हो रहे हो। (आ दिवम्) द्योतनात्मक सूर्यादि लोक, (अपः) अन्तरिक्षलोक और जल इन सब के (प्रतिमानम्)–परिमाणकर्त्ता आप ही हो, तथा आप अपरिमेय हो। कृपा करके हमको अपना तथा सृष्टि का विज्ञान दीजिए॥

सम्पादकीय

विवाह संस्कार

मनुष्य जन्म में संस्कारों का अतीव महत्व है, इसीलिए ऋषियों ने हमारे लिए गर्भाधान से लेकर अन्त्येष्टि पर्यन्त सोलह संस्कारों का प्रावधान किया है, अन्यत्र किसी भी मत-मजहब, रिलीजन में इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं है, अपितु अनेक प्रकार की विकृतियां हैं यथा-बपतिस्मा, सुन्नत, चक्रांकन आदि।

हमारे इस सनातन राष्ट्र में हजार वर्षों की गुलामी ने हमें कितना विकृत किया, इसका ठीक-ठीक परिगणन कर, परिमार्जन यदि कोई कर पाया तो वे थे ऋषिवर दयानन्द। क्योंकि ऋषि दयादन्द ने जिस प्रकार गृहसूत्रों का अध्ययन कर ऋषियों के ठीक-ठीक अभिप्राय को हमारे लिए सुरक्षित किया, ऐसा अन्य किसी भी कर्मकाण्ड के पद्धतिकार ने नहीं किया। अपितु मूल संस्कारों को कुछ विकृत अवश्य किया है, जिसके परिणाम स्वरूप संस्कार महत्वहीन होकर लुप्त हो चुके हैं, चन्द गुरुकुलों, आश्रमों आदि को छोड़ दीजिए आज उपनयन, वेदारम्भ और समावर्तन नामक संस्कारों के बारे में बड़े-बड़े धर्मध्वजी कुछ भी नहीं बतला पाते हैं, प्रारम्भ के तीन महत्वपूर्ण संस्कारों के तो नाम भी कोई बता पाये तो आश्चर्य स्वाभाविक है। पुनरपि वर्त्तमान काल में प्रचलित संस्कारों में से सबसे मुख्य संस्कार है- "विवाह संस्कार", और यह भी मात्र नाम को ही "संस्कार" कहा जाता है, जबकि वस्तुतः यह वर्त्तमान में सबसे बड़ा विकार बनकर यथार्थवादी सोच वाले मनुष्यों के लिए एक बोझ ही बन चुका है, जिसे लोग अभी ढो ही रहे हैं, किन्तु कब तक ढो पाएंगे? कहा नहीं जा सकता।

वर्त्तमान में तथा-कथित धर्म के क्षेत्र अर्थात् बाबाओं के बीच में विवाह संस्कार बड़ी ही चर्चा का विषय बना हुआ है और इस चर्चा का कारण भी एक नाटकीय घटनाक्रम है। हुआ यह है कि **श्रीराम कथा के एक वक्ता शिरोमणि मुरारी बापू ने अपने ग्राम के श्मशान स्थल पर विवाह करवा डाला, जिस पर पुरी शंकराचार्य जी एवं रामभद्राचार्य जी आदि की कठोर टिप्पणी आयी कि यह सनातन परम्परा का नितान्त उल्लंघन है और मोरारी बापू को ऐसा नहीं करना चाहिए था, साथ ही यह भी समझाया कि मोरारी बापू ने कभी सनातन परम्पराओं का पालन नहीं किया, इन जगत्गुरुओं ने कहा कि वे शेरो-शायरी श्रीराम कथा के मंच से सुनाते हैं, फिल्मी गीत गाते हैं, महिलाओं को पुरुषों को कथा के मध्य नचाते हैं आदि। चलिए आजीवन प्रचार में लगे जगत्गुरुओं ने विवाह पर कुछ बोला तो सही, अन्यथा धर्मगुरुओं, प्रवचनकारों के बीच एक अघोषित समझौता है, तुम हमारे बारे में मौन रहो! हम तुम्हारे बारे में मौन रहेंगे! तुम हमारे पाखण्ड मत खोलिए! हम तुम्हारे पाखण्ड नहीं खोलेंगे! यदि ऐसा अघोषित समझौता न होता तो शंकराचार्य गण किसी भी दशनाम संन्यासी को कथा करने की छूट ही क्यों देते? हमारे ही बाल्यकाल तक ऐसी छूट नहीं थी, संन्यासी गण यदि कहीं कथाओं में जाते थे, तो कथाकार से उच्चासन पर बैठकर आशीर्वचनात्मक**

शेष अगले पृष्ठ पर

संपादकीय का शेष...

प्रवचन देकर कुछ ही समय के बाद आश्रमादि को लौट जाते थे, भागवत् कथा को तो संन्यासी हेय दृष्टि से देखते थे, क्योंकि भागवत्कथा में रासलीला, गोपीवस्त्रहरणादि की कम से कम संन्यासाश्रम विरुद्ध कथाएं भरी पड़ी हैं (हैं तो सभी आश्रमों की मर्यादा के विपरीत) लेकिन जब कथा पाण्डाल इन्हीं मोरारी बापु जैसे कथाकारों की शेरो-शायरी और युवक-युवतियों के नाचने से बाजार बन गये, तब कुछ संन्यासी गणों का धैर्य डोल गया। संन्यासधर्म को ताक पर रखकर, जो प्रतिज्ञाएं संन्यास लेते समय की थी-"लोकैष्णा मया परित्यक्ता, वित्तैष्णा मया परित्यक्ता, पुत्रैषणा मया परित्यक्ता" उन सभी संकल्पों को भस्मीभूत कर कथाबाजार-कथाव्यापार में उतर गये, एक के बाद दूसरे उतरे और आज बड़े-बड़े महामण्डलेश्वर और छद्म शंकराचार्य भी कथा करते हैं, और दु:ख तब होता है जब श्मशान विवाह के विरुद्ध बोलने वाले जगद्गुरु भी मौन बैठे रहते हैं, संन्यास की मर्यादाओं की ठीक-ठीक व्याख्या नहीं बताते, नहीं सिखाते। जबकि गेरुए वस्त्रधारी लोग खुले आम बाजार में बैठकर धर्म की बोली लगा रहे हैं, भक्तों के चढ़ावे से कार्पोरेट बन चुके हैं।

पुनरपि यदि विवाह संस्कार की बात की जाए तो मोरारी बापू के शमशान विवाह से मुझे कोई आश्चर्य नहीं! क्योंकि यह विवाह संस्कार तो पहले ही विकार बन चुका है, इस संस्कार की विधियां तार-तार हो चुकी हैं। आज विवाह का तात्पर्य है- शराबियों का उत्सव, फूहड़ों की फूहड़ता का जमावड़ा, फैशन शो बिना टिकट और खाना-पीना भी फ्री, ऊपर से बिना टिकट ही डान्स शो, वह भी कुलवधुओं का, माताओं का, बहिनों का और बेटियों का, इसको और रंगा-रंग करने का बाकी कार्य बहू के साथ ससुर नाचकर, बेटी के साथ बाप नाचकर, बहिन के साथ भाई नाचकर और जिन्हें जानते ही नहीं उनके साथ हाथों में हाथ, बाहों में बाहें डाल पूरा कर दिया जाता है। क्या हमारे ऋषियों ने कभी कल्पना की होगी कि इस संस्कार को ऐसे विकृत कर दिया जायेगा!

ऋषि दयानन्द लिखते हैं:- विवाह उसको कहते हैं कि जो पूर्ण ब्रह्मचर्यव्रत द्वारा विद्या-बल को प्राप्त तथा सब प्रकार से शुभ गुण-कर्म-स्वभाव में तुल्य, परस्पर प्रीतियुक्त होके निम्नलिखित प्रमाणे सन्तानोत्पत्ति और अपने-अपने वर्णाश्रम के अनुकुल उत्तम कर्म करने के लिए स्त्री और पुरुष का सम्बन्ध होता है। इस विवाह संस्कार का प्रारम्भ विधि के अनुसार दोनों वर-कन्या अपने-अपने घर पर सुगन्धित जलादि से स्नान के साथ करते हैं और विवाह संस्कार की पूर्णता सारे संस्कार को सम्पन्न करने के उपरान्त वरगृह में यज्ञ से होती है। ऋषियों ने वर के घर से चलने से लेकर और वापस घर आने तक किये जाने वाले आवश्यक कर्मों में से कुछ भी छोड़ा नहीं है। विवाह कब होना चाहिए? इसका वर्त्तमान ज्योतिषी निर्धारण करते हैं, जिससे एक ही दिन में विवाहों की भीड़ से नगरों-महानगरों में प्रत्येक चौक-चौराहों पर सामान्य कार्यरत मनुष्यों के नित्यकार्य भी बाधित होते हैं, ऋषियों ने कहा है कि उत्तरायण, शुक्लपक्ष अच्छे दिन अर्थात् जो दिन विवाह करने वाले वर-कन्या की प्रसन्नता के साथ ही विवाह करवाने वाले माता-पिता, सगे-सम्बन्धियों को भी अनुकुल हों, साथ ही आश्वालायन ऋषि के मतानुसार सभी काल में अर्थात् उत्तरायण और शुक्लपक्ष के अभाव में भी "विवाह संस्कार" हो सकता है, किन्तु एक मुख्य भूमिका समय निर्धारण में कन्या की माता की होती है, जिसे वर्त्तमान में कोई महत्व नहीं दिया जाता, ऋषि दयाननद जी ने संस्कार विधि में लिखा है- जब कन्या रजस्वला होकर शुद्ध हो जाए, तब विवाह करना चाहिए। यह विवाह के मुहूर्त्त निर्धारित करने वाले पण्डित भला कैसे बता सकते हैं? अत: इस संस्कार में विकार की प्रवृति यही मुहूर्त्त नामक प्रकरण से प्रारम्भ हो गयी। विवाह स्थल पर रात्रि में पहुँचना, रात्रि में विवाह करना-करवाना, रात्रि के मुहूर्त्त निर्धारण होना, संस्कार को विकृत ही करता है, क्योंकि-विवाह की मुख्य दो विधियां हैं एक पूर्व विधि और दूसरी उत्तर विधि। पूर्वविधि के अन्त में सूर्यदर्शन का विधान ही बताता है कि- यह विधि सूर्यास्त से पूर्व होनी चाहिए। उत्तरविधि में ध्रुव दर्शन का विधान है, स्पष्ट है कि- यह विधि सूर्यास्त के बाद नक्षत्रों (तारों) के उदय होने पर ही सम्भव है। वर्त्तमान में प्रचलित सबसे मुख्य "वरमाला" का कहीं कोई वर्णन नहीं है, जबकि अब यदि सम्पूर्ण विवाह के कार्यक्रम को देखा जाय तो शेष सब विधियाँ तो जैसे इस वरमाला के लिए ही हो रही हैं और शेष सारी जिम्मेदारी कैमरामैन निभा लेता है, जिसमें वह विवाह को एक सीरियल (धारावाहिक) बनाने का पूर्ण प्रयत्न-पुरुषार्थ करता है। इस संस्कार का अन्तिम संस्कार करता है "डी.जे.", जिसके कारण विवाह में आये हुए सभ्य शिष्ट लोग एक दूसरे से नमस्ते-अभिवादन कर कुशलक्षेम भी शोर के कारण नहीं पूछ सकते, जिसमें बजने वाले गाने सारी शिष्टता को तार-तार कर देते हैं, और दुनिया भर में अपनी शिष्टता की धाक दिखाने वाले लोग भी अपने घर के बच्चों के सामने भीगी बिल्ली बनकर नतमस्तक हो जाते हैं।

आर्यों/आर्याओं! आर्य वंशजों! पाठकगणों! विचार कीजिए, अधिक दूर-दूर नहीं तो अपने घरों पर तो नियन्त्रण कीजिए, मुख्यत: तीन विकारों को प्राथमिकता के आधार पर नष्ट कीजिए- १. शराब-मांस का सेवन, २. डी.जे. का ध्वनि प्रदूषण ३. अमर्यादित फैशन के साथ घर की बहू-बेटियों का नाच। और सावधान! यदि विकृतियां मिटाने को आप तैयार न हुए तो कोई न कोई मोरारी बापू आपके भावी वंशजों का विवाह भी चिता की अग्नि के फेरे से करवाएगा और आप देखते रह जाओगे, जीवन रहते संस्कारों को संस्कार बना लीजिए! अरे जीवन में एकबार तो ऋषि दयानन्द की संस्कार विधि पढ़ लीजिए! पूरी न सही तो विवाह प्रकरण और गृहाश्रम प्रकरण तो पढ़ ही लीजिए!! अन्यथा...?

आओ यज्ञ करें!

अमावस्या	18 दिसम्बर दिन-सोमवार	मास-पौष	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-मूल
पूर्णिमा	2 जनवरी दिन-मंगलवार	मास-पौष	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-आर्द्रा
अमावस्या	17 जनवरी दिन-बुधवार	मास-माघ	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-उत्तराषाढ़ा
पूर्णिमा	31 जनवरी दिन-बुधवार	मास-माघ	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-पुष्य

वेदवाणी वैज्ञानिक भाषा संस्कृत

-आर्य सोनू, कैथल

- गतांक का शेष

इन गुणों के कारण नासा संस्कृत के प्रति आकर्षित है। समय-समय पर वहाँ अनेक भारतीय विद्वानों (संस्कृतज्ञ) व संस्कृत ग्रन्थों को शोध हेतु मंगवाया गया है। नासा के पास हजारों संस्कृत पान्डुलिपियाँ हैं जो ताड़पत्रों पर हैं, यह हजारों संस्कृत की पान्डुलिपियाँ देश के गुलामी के काल में अंग्रेजों के द्वारा चुराई गई और नासा उन पर अनुसंधान कर रहा है। संस्कृत का हर शब्द उस वस्तु के विषय में जिसका वह नाम है सामान्य गुण व लक्षण प्रकट करता है। ऐसा अन्य भाषाओं में न के बराबर है। पदार्थों के नामकरण ऋषियों ने वेदों में से किये हैं। वेदों में यौगिक शब्द है और हर शब्द गुण पर आधारित है। यहाँ हम हृदय शब्द का विश्लेषण करते हैं- इसे अंग्रेजी में हॉर्ट कहते हैं। अंग्रेजी शब्द इसके लक्षण प्रकट नहीं कर रहा किन्तु संस्कृत शब्द हृदय इसे परिभाषित करता है। हमारे शास्त्रों में हृदय शब्द का अक्षरार्थ इस प्रकार है।

तदेतत् त्र्यक्षरं हृदयमिति। ह इत्येकमक्षरं हरित्।
द इत्येकमक्षरं ददाति, य इत्येकमक्षरं मिति॥

अर्थात्- **ह** से हरित, शिराओं से अशुद्ध रक्त लेता है। **द** से ददाति अर्थात् शुद्धि के लिए फेफडों को भेजता है। **य** से मति अर्थात् सारे शरीर में रक्त को गति प्रदान करता है।

इस सिद्धान्त की खोज 1922 में विलियम हार्वे ने की थी जिसे स्वयं हृदय (संस्कृत शब्द) करोड़ों वर्षों से उजागर कर रहा है। वैदिक मन्त्रों के अर्थ इसी प्रकार जानकर नवीन अन्वेक्षण हमारे ऋषि-महर्षि किया करते थे। विशेषज्ञों का मानना है कि संस्कृत गणित व विज्ञान-तकनीकि की पढ़ाई के लिए अत्यन्त उपयोगी है, क्योंकि इसे पढ़ने से मन एकाग्र होता है। स्पीच थेरेपी में भी यह काम आती है क्योंकि इसकी वर्णमाला वैज्ञानिक है जिसके उच्चारण मात्र से ही गले का स्वर स्पष्ट हो जाता है। इससे कल्पना व स्मरण शक्ति को बढ़ावा मिलता है। कॉल सैन्टरों हेतु अनेक युवक-युवतियाँ संस्कृत बोलकर अपना उच्चारण सुधार रहे हैं।

व्यवस्थित भाषा- संस्कृत विश्व की सबसे स्पष्ट एवं व्यवस्थित भाषा भी है। संस्कृत लिपि में अक्षरों को दो भागों में बाटा जा सकता है। जो बिना किसी आश्रय के बोले जाते हैं वे स्वर और जो दूसरे के आश्रय से बोले जाएं (स्वरों को मिलाकर) वो व्यंजन कहे जाते हैं। इस प्रकार का वैज्ञानिक विभाग अन्य भाषाओं में देखने को नहीं मिलता। जैसे- अंग्रेजी भाषा में 5 स्वर हैं। इनमें से कुछ तो स्वर की कसौटी पर ही खरे नहीं उतरते। व्यन्जनों का भी वैज्ञानिक विभाग संस्कृत में किया गया है।

क से ङ्	कवर्ग, कण्ठ की सहायता से बोले जाने वाले।
च से ञ	चवर्ग, तालव्य तालु की सहायता से उच्चारित।
ट से ण	टवर्ग, मूर्धन्य मूर्धा की सहायता से उच्चारित।
त से न	तवर्ग, दन्तव्य दान्त की सहायता से बोले जाने वाले।
प से म	पवर्ग, ओष्ठव्य, ओष्ठ की सहायता से बोले जाने वाले।

अब जैसे क ख ग के बाद त बोल दिया, तो तुरन्त गलती पकडी जाएगी क्योंकि क एवं त की ध्वनि में भिन्नता है। ऐसा व्यवस्थित विभाजन अन्यत्र दुर्लभ है।

संस्कृत शब्दों के एक नहीं कई अर्थ लिए जाते हैं। इन्हें प्रकरण के अनुसार समझा जाता है। जैसे अकेले अग्नि शब्द के अनेक अर्थ हैं। कहीं परमात्मा, कहीं भौतिक अग्नि, कहीं सूर्य की अग्नि- प्रकरणानुसार अर्थ ग्रहण कर हमारे ऋषि सृष्टि का ज्ञान पाते थे। संस्कृत का शब्दकोष सब भाषाओं में व्यापक (बड़ा) है। संस्कृत व्याकरण (पाणिनी) सर्वश्रेष्ठ है क्योंकि पाणिनी के समय से आज तक उसमें एक शब्द या एक चिन्ह तक के बदलाव की जरुरत नहीं पड़ी।

संस्कृत का पहला अखबार सुधर्मा है, जो 1970 से शुरु होकर आज भी ऑनलाईन उपलब्ध है। कर्नाटक, मध्यप्रदेश व राजस्थान में आज भी कई गाँव ऐसे हैं जो संस्कृत बोलते हैं किन्तु भारतीय जनसंख्यानुसार उनकी गणना नगण्य है। विश्व प्रसिद्ध पत्रिका फोर्ब्स का मानना है कि अनुवाद हेतु सबसे श्रेष्ठ उपलब्ध भाषा संस्कृत है।

भारत के मस्तक की बिन्दी- भारत में अनेक संस्थाओं के ध्येय वाक्यं संस्कृत में है। जैसे- भारतीय नौ सेना- **शं नो वरूणः**, वायुसेना- **नभः स्पृशं दीप्तम्**, थलसेना- **सेवा अस्माकं धर्मः**, भारत के राज चिन्ह में- **सत्यमेव जयते** (मुन्डकोपनिषद्), दूरदर्शन- **सत्यम् शिवम् सुन्दरम्**, हिन्दी अकादमी- **अहम् राष्टीय संगमनी वसुनाम्**, सी.बी.एस.ई.- **असतो मा सद्गमय**, एन.सी.आर.टी.- **विद्यायाऽमृतम् श्रुते** आदि। इनके अलावा अनेक संस्थानों के ध्येय वाक्य भी संस्कृत में हैं, जो इन्टरनेट पर आपको मिल जाएंगे। केवल भारत ही नहीं अपितु इन्डोनेशिया जलसेना- **जलेष्वेव जयामहे**, नेपाल सरकार- **जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसि** आदि भी संस्कृत में हैं, किन्तु खेद की बात यह है कि संस्कृत को यह सम्मान केवल ध्येय वाक्यों तक ही सीमित है।

गुरु गुड़ रह गया और चेले शक्कर बन गए- यह दुर्भाग्य और शर्म की बात है कि जिस भाषा की विशेषताओं पर पूरा ग्रन्थ बान्धा जा सकता है, आज अपनी ही जन्मस्थली पर लुप्तप्राय हो गई है। धरातल पर संस्कृत हेतु हमारे पुरुषार्थ शून्य हैं, फिल्म और मिडिया में संस्कृत का इस्तेमाल मात्र हास्य हेतु होता है। इसे रूढ़िवादी व मृत मान लिया गया है। व्यवस्थाओं के अभाव में यह पन्डे व पाखण्डियों की भाषा बनकर रह गई है। वहीं दूसरी और संस्कृत की वैज्ञानिकता व वैभव को देखकर यू.एस.ए., जर्मनी व ब्रिटेन जैसे देश नर्सरी से संस्कृत का पठन-पाठन शुरू कर चुके हैं। नासा (**NASA**) के मिशन संस्कृत की पुष्टि उनकी वेबसाईट भी करती है, जिसमें स्पष्ट लिखा है कि नासा 20 साल से काफी धन व परिश्रम संस्कृत के लिए लगा चुकी है। अतः वर्तमान परिस्थिति पर उपरोक्त पंक्तियां ही चरितार्थ होती हैं कि विश्व को सिखाने वाला भारत (आर्यावर्त्त) गुरु गुड़ ही रह गया और चेले (संस्कृत पर शोध में लगे देश) शक्कर (विकसित) हो गये।

वेदों में स्वर शास्त्र का महत्व

–आचार्य कौशल किशोर पाण्डेय
(अथर्ववेदाचार्य)

वेदों के अध्ययन में स्वर-शास्त्र का विशेष महत्व है, क्योंकि वैदिक मन्त्रों के शुद्ध उच्चारण एवं अर्थबोध के लिए स्वरों का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक है। किसी शब्द के किसी अक्षर को स्वर में पढ़े जाने पर ही उस शब्द के अर्थ का निर्णय होता है। यदि किसी शब्द में अक्षर के स्वर को बदल दिया जाये, तो उसका अर्थ परिवर्तित हो जाता है। यथा-'इन्द्रशत्रुः' शब्द है। इस में दो पद हैं-इन्द्र और शत्रु। यदि आदि पद को उदात्त समझा जावे, तो इसका विग्रह बहुब्रीहि समास में 'इन्द्रः शत्रुः यस्य सः' होगा अर्थात् "इन्द्र उसको मारने वाला होगा।" यदि अन्तिम पद को उदात्त माना जावे तो इसका विग्रह तत्पुरुष समास में 'इन्द्रस्य शत्रुः' होगा, जिसका अर्थ होगा-इन्द्र को मारने वाला। इस प्रकार स्वर के परिवर्तन से अर्थ परिवर्तित हो जाता है। अतः वेदार्थ को समझने के लिए स्वरों का ज्ञान अनिवार्य है। 'तैत्तिरीय उपनिषद्' के अनुसार वेदों के अर्थों को समझने के लिए वर्ण, स्वर, मात्रा, बल-इन सबको जानना चाहिए। "वर्णः स्वरः मात्रा बलम् इत्येतज्जिज्ञासितत्यम्"।

स्वर के प्रकार–वैदिक वाङमय में मुख्यतः तीन स्वर मान्य हैं-उदात्त, अनुदात्त और स्वरित। इनका संक्षिप्त विवेचन निम्न प्रकार है।

1. उदात्त='उच्चैरुदात्तः' कण्ठ, तालु आदि स्थानों के ऊपर के भाग से जिस स्वर का उच्चारण होता है, वह उदात्त कहलाता है।
2. अनुदात्त='नीचैरनुदात्ताः'। कण्ठ, तालु आदि स्थानों के नीचे के भाग से उच्चरित स्वर 'अनुदात्त' कहलाता है।
3. स्वरित='समाहारः स्वरितः'। उदात्तत्व और अनुदात्तत्व दोनों धर्मों का मेल जिस वर्ण में होता है, वह स्वरित होता है। इस प्रकार स्वरित में उदात्त और अनुदात्त दोनों स्वरों के धर्म का मिश्रण होता है।

स्वरित दो प्रकार का होता है-स्वतन्त्र और आश्रित। स्वतन्त्र स्वरित के भी दो भेद हैं– संधिज और असंधिज। संधिज स्वरित तीन प्रकार का होता है–क्षैप्र, प्रश्लिष्ट, और अभिनिहित। असंधिज स्वरित एक ही प्रकार का होता है और वह जात्य-स्वरित या नित्य-स्वरित के नाम से पुकारा जाता है।

आश्रित स्वरित भी पाँच प्रकार का है–पादवृत्त, प्रातिहत, तैरोव्यञ्जन, तैरोविराम और तायाभाव्य। इन में अन्तिम दो अर्थात् तैरोविराम और तायाभाव्य की सत्ता यजुर्वेद के पदपाठ में ही है।

1. नित्य या जात्य स्वरित-एक पद में नित्य रूप से पाये जाने वाले स्वरित को नित्य स्वरित कहते हैं। पद में स्वभावतः होने के कारण इसको जात्य स्वरित भी कहा जाता है। यथा-क्व वी॒र्या॑णि।
2. प्रश्लिष्ट स्वरित-उदात्त-धर्मवान पूर्वपदान्तीय ह्रस्व 'इ' तथा उत्तरपदादि अनुदात्त-धर्मवान् ह्रस्व 'इ' की संधि से जो स्वरित उत्पन्न होता है। वह प्रश्लिष्ट स्वरित कहलाता है। यथा–

   स्रुचीव=स्रुचि+इ॒व, दि॒वीव=दिवि+इ॒व।
3. अभिनिहित स्वरित-उदात्त-धर्मवान् पूर्वपदान्तीय 'ए' तथा 'ओ' के साथ अनुदात्त-धर्मवान् उत्तरपदादि 'अ' की जो अभिनिहित-पूर्वरूप संधि होती है, उसमें संधिज स्वर स्वरित होता है और वह अभिनिहित स्वरित कहलाता है।

   तेऽवर्धन्त=ते+अ॒व॒र्ध॒न्त, सोऽध॒मः=स+अ॒ध॒मः।।
4. क्षैप्र स्वरित–उदात्त-धर्मवान् पूर्व पदान्तीय 'इ' तथा 'उ' की अनुदात्त-धर्मवान् उत्तरपदादि असमान अच् के साथ जो क्षैप्र (यण्) संधि होती है, उसमें संधिज स्वर सर्वत्र स्वरित होता है और वह क्षैप्र स्वरित कहलाता है

   यथा ह्य॑ग्ने=हि+अ॒ग्ने, त्वि॑न्द्र=नु+इ॒न्द्र।
5. आश्रित स्वरित-उदात्त के बाद आने वाला अनुदात्त "उदात्तादनुदात्तस्य स्वरितः" पाणिनि 8/4/67 इस स्वर-नियम के अनुसार स्वरित में परिवर्तित हो जाता है, यदि उसके आगे कोई उदात्त या स्वतन्त्र स्वरित न हो। यह स्वरित पूर्ववर्ती उदात्त पर आश्रित होने के कारण आश्रित-स्वरित कहलाता है। यथा-च॒कार॑, इन्द्र॑ः।

स्वराङ्कन प्रकार

1. उदात्त-ऋग्वेद, यजुर्वेद, तथा अथर्ववेद-तीनों में उदात्त पर कोई चिह्न नहीं लगता है।

   यथा इन्द्रः (इ), अ॒ग्निः (निः)।
2. अनुदात्त-ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद-तीनों में अनुदात्त को वर्ण के नीचे एक पड़ी रेखा से चिह्नित करते हैं। यथा-अ॒ग्निः (अ॒), च॒कार॑ (च॒)।
3. स्वरित-ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद-में आश्रित स्वरित को वर्ण के ऊपर खड़ी रेखा से चिह्नित किया जाता है, यथा-इन्द्र॑ (द्र॑), च॒कार॑ (र॑)। ऋग्वेद में स्वतन्त्र स्वरित को भी वर्ण के ऊपर खड़ी रेखा से चिह्नित किया जाता है। यथा-क्व॑, वी॒र्या॑णि। अथर्ववेद में स्वतन्त्र स्वरित को, यदि उसके आगे कोई उदात्त स्वर न हो तो, (∫) इस चिह्न से अंकित किया जाता है। यथा–व्यो∫मन् तन्व∫ः। यजुर्वेद में उदात्त परे न होने पर स्वतन्त्र स्वरित वर्ण के नीचे को (L) इस चिह्न से अंकित किया जाता है।

यथा-वा॒यु॒व्या॒न्। स्वतन्त्र स्वरित के बाद यदि उदात्त या स्वतन्त्र स्वरित आवे तो स्वरित के उच्चारण में इस कम्प को १ या ३ के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। चदि स्वतन्त्र स्वरित ह्रस्व वर्ण परे है तो उसे १ के द्वारा तथा यदि दीर्घ वर्ण पर है, तो ३ के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। दोनों अवस्थाओं में अंक के ऊपर खड़ी रेखा तथा नीचे पड़ी रेखा होती है। किन्तु दोनों में अन्तर यह है कि ह्रस्व कम्प में स्वरित वाला वर्ण अचिह्नित रहता है, जबकि दीर्घ कम्प में स्वरित वर्ण के नीचे भी पड़ी रेखा होती है। यथा-अप्स्व १ न्तः परस्त्या ३स्वा इत्यादि। अथर्ववेद में ह्रस्व कम्प को १' के द्वारा प्रदर्शित किया जाता है। यहाँ अंक के ऊपर खड़ी रेखा का चिह्न न लगाकर स्वतन्त्र स्वरित वाले वर्ण पर लगाते हैं। यथा-अ॒प्स्वं १ न्तः। यजुर्वेद में कम्प नहीं होता किन्तु उदात्त परे होने पर स्वतन्त्र स्वरित को वर्ण के नीचे(-) इस चिह्न से अंकित किया जाता है। यथा- त॒न्वा॒ शन्त॑मया सामवेद के स्वर–ऋग्वेद में जो स्वर चिह्नों द्वारा प्रदर्शित किया जाता है, सामवेद में वहीं अंङ्कों द्वारा दिखाया जाता है। ऋग्वेद में उदात्त के लिए कोई चिह्न नहीं लगता है, किन्तु सामवेद में उदात्त के लिए १ का अंक लगता है। ऋग्वेद में स्वरित के लिए ऊपर खड़ी रेखा (।) लगायी जाती है, सामवेद में स्वरित के लिए २ का अंक लगता है। ऋग्वेद में अनुदात्त के लिए नीचे पड़ी रेखा (-) लगती है और सामवेद में उसके लिए ३ का अंक लगता है। यथा-अग्न आ याहि वीतये।

संध्या काल

पौष मास, शिशिर ऋतु, कलि-5118, वि. 2074
(4 दिसम्बर 2017 से 2 जनवरी 2018)
प्रातः कालः 5 बजकर 45 मिनट से **(5.45 A.M.)**
सांय कालः 6 बजकर 45 मिनट से **(6.45 P.M.)**

माघ मास, शिशिर ऋतु, कलि-5118, वि. 2074
(3 जनवरी 2018 से 31 जनवरी 2018)
प्रातः कालः 5 बजकर 45 मिनट से **(5.45 A.M.)**
सांय कालः 6 बजकर 45 मिनट से **(6.45 P.M.)**

मनुर्भव:

-आचार्य सतीश

पिछले अंक से आगे-

आइए! अब हम इनमें से प्रत्येक के बारे में विस्तार से जानते हैं।

वैज्ञानिक प्रवृति व तार्किक सोच- अर्थात् अपनी ऐसी सोच विकसित करना कि हम किसी भी विषय पर चिन्तन-मनन करके निर्णय करें। केवल मात्र सुने सुनाए पर निर्णय न हो, उसका परीक्षण करें। जो-जो मानने योग्य न हो उसे न मानना, जो सुधार करके मानने योग्य हो उसे सुधार करके मानना, जो ठीक उसी रूप में मानने योग्य हो उसे उसी रूप में मानना। इसका एक उदाहरण इस प्रकार है- ईश्वर को बिना विचार किये जैसा जिसने बताया वैसा मानना या न मानना अपितु वह ठीक जैसा है वैसा ही बुद्धि, तर्क आदि से जानकर उसे उसी रूप में मानना। यही ज्ञान से विज्ञान की ओर जाना है, यही दार्शनिक विधि है अर्थात् वैज्ञानिक प्रवृति हो, तार्किक सोच हो। केवल इस आधार पर नहीं मानना कि यह परम्परा में सम्मिलित है। क्योंकि परम्परा में अनेक बातें शामिल होती हैं, कुछ सही होती हैं कुछ गलत होती हैं। संसार में तो उचित व अनुचित दोनों ही चल रहे होते हैं, हमारा कार्य है उसमें से जाँच परखकर, चिन्तन-मनन करके उचित को मानना, स्वीकार करना और अनुचित को छोड़ देना अर्थात् परीक्षण करके सही को स्वीकार करना तथा गलत को छोड़ देना। यही बुद्धिमत्ता है, यही तार्किकता है, यही वैज्ञानिक सोच है और यह गुण हमारे अन्दर विकसित होने ही चाहिएं, इससे हमारी उन्नति का मार्ग खुलता है। हम अनेक अनावश्यक कार्यों से बच जाते हैं। समय सामर्थ्य व मानसिक बल बचा ले जाते हैं। समय-सामर्थ्य-धन और मानसिक बल बचता है अनावश्यक विचारों व कार्यों के छोड़ देने से। ऐसा मनुष्यमात्र का कर्तव्य है। यही मनुष्यपन है, क्योंकि वेद में भी कहा गया है-मनुर्भव: अर्थात् मनन्शील हो। मननशील व्यक्ति ही तर्क कर सकता है।

यह वैज्ञानिक सोच व तार्किकता कोई नया सिद्धान्त नहीं है, न ही यह आधुनिक सिद्धान्त है जैसा कि कुछ लोग सोचते हैं। हमारी परम्परा में तो परमात्मा के निर्देश से लेकर दर्शनग्रन्थों में हमारे ऋषियों द्वारा इसका प्रयोग किया गया है। दर्शनग्रन्थों का तो प्रत्येक सिद्धान्त पहले तर्क की कसौटी पर कसा जाता है, फिर ऋषि उस सिद्धान्त को प्रतिपादित करते हैं जो तर्क की कसौटी पर खरा उतरता है। यही प्रक्रिया सभी आर्ष ग्रन्थों की है। इस वैज्ञानिक प्रवृति व तार्किक सोच का जब आध्यात्मिक क्षेत्र में बिल्कुल प्रयोग बन्द कर दिया गया तो उसका परिणाम यह हुआ कि- आध्यात्मिक क्षेत्र में अन्धविश्वास और अन्धश्रद्धा व्यापक हो गयी जिससे पाखण्ड को बढ़ावा मिला और सामान्य लोगों का शोषण प्रारम्भ हो गया। ईश्वर के सम्बंध में बुद्धिपूर्वक विचार न करने के कारण से अनेक प्रकार की आवधारणाएं व्याप्त हो गयी जो कल्पना पर आधारित थी अर्थात् जिनका सत्य से कोई लेना-देना नहीं था। उन्हीं काल्पनिक अवधारणाओं पर अनेक मत-पंथ प्रारम्भ हो गये और मनुष्यों को परस्पर बांट दिया। अनेक दार्शनिक सिद्धान्त जनमानस से लुप्त हो गये और उनके स्थान पर मनमानी कल्पनाएं व्याप्त हो गई। अध्यात्म में भी अनेक कर्म-काण्ड जुड़ गये और जिस अध्यात्म से मनुष्य की उन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है वही कुछ लोगों की जीविका का साधन बन गया और अनेक लोगों के शोषण का आधार। यदि धर्म, अध्यात्म, श्रद्धा, विश्वास के क्षेत्र में वैज्ञानिक प्रवृति व तार्किक सोच का प्रयोग नहीं होता है तो समस्या बनी रहती है। अत: सामान्य जन को शोषण, अन्धविश्वास, पाखण्ड आदि से बचना व बचाना है और उसका उन्नति का मार्ग प्रशस्त करना है तो यह गुण हमें विकसित करना ही होगा। तो आइए हम सभी आर्यत्व के इस प्राथमिक लक्षण को धारण करें, जिससे ईश्वर के स्वरूप को भी ठीक-ठीक समझ सकें व अन्यों को समझा सकें और अनेक लोगों को उन्नति के, सुख के मार्ग पर बढ़ा सकें, उन्हें शोषण से बचा सकें और स्वयं भी इस मार्ग पर बढ़ सकें तथा जीवन के सभी क्षेत्रों में अपना व अन्यों की उन्नति का मार्ग प्रशस्त कर सकें।

क्रमश: अगले अंक में.....

आर्य प्रचारक कक्षा करनाल में प्रचारकों के साथ आचार्य धर्मपाल जी (09-10 दिसम्बर प्रथम सत्र)

आर्य प्रचारक कक्षा दिल्ली में प्रचारकों के साथ आचार्य सतीश जी (09-10 दिसम्बर द्वितीय सत्र)

राष्ट्रीय आर्य छात्र सभा द्वारा विद्यालय के छात्र-छात्राओं को वैदिक सिद्धान्त जनाने का सतत् कार्यक्रम

॥ ओ३म्। कृण्वन्तो विश्वमार्यम्... ॥

द्विदिवसीय लघु गुरुकुल

राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

(आर्य प्रशिक्षण सत्र)

स्थान : वैदिक साधन आश्रम,
तपोवन, नालापानी, रायपुर रोड़, देहरादून, उत्तराखण्ड

दिनांक 24–25 दिसम्बर, 2017

रविवार, 24 को प्रातः 8 बजे तक पहुँचे

संयोजक :- आचार्य हनुमत् प्रसाद, 8468838494, 9868792232, 8076612871

निवेदक : ब्रजेश जी 9627484171 | नितेश जी 9720838312 | प्रेम प्रकाश शर्मा 9412051586 | विजयपाल आर्य (अध्यक्ष) 9410395336

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा, उत्तराखण्ड

आर्य प्रचारक कक्षा जीन्द में प्रचारकों के साथ आचार्य महेश जी (18–19 नवम्बर प्रथम सत्र)

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आयोजित दो दिवसीय सत्रों व सभा से सम्बन्धित नवीन जानकारी सभा की बेवसाईट–

www.aryanirmatrisabha.com

पर उपलब्ध है। अत: आप वहाँ से जानकारी ले सकते हैं। यह पत्रिका भी प्रत्येक मास दिनांक 10 को सभा की बेवसाईट पर डाल दी जाती है अत: पत्रिका को पढ़ने के लिए साईट के लिंक

www.aryanirmatrisabha.com/पत्रिका पर जाएं।

04 दिसम्बर–02 जनवरी–2017 **पौष** ऋतु– शिशिर

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
मृगशिरा कृष्ण प्रतिपदा 4 दिसम्बर	आर्द्रा कृष्ण द्वितीया 5 दिसम्बर	पुनर्वसु कृष्ण तृतीया 6 दिसम्बर	पुष्य कृष्ण चतुर्थी / पंचमी 7 दिसम्बर	आश्लेषा कृष्ण षष्ठी 8 दिसम्बर	मघा कृष्ण सप्तमी 9 दिसम्बर	पू॰ फाल्गुनी कृष्ण अष्टमी 10 दिसम्बर
उ॰ फाल्गुनी कृष्ण नवमी 11 दिसम्बर	हस्त कृष्ण दशमी 12 दिसम्बर	चित्रा कृष्ण एकादशी 13 दिसम्बर	स्वाती कृष्ण द्वादशी 14 दिसम्बर	विशाखा कृष्ण त्रयोदशी 15 दिसम्बर	अनुराधा कृष्ण चतुर्दशी 16 दिसम्बर	ज्येष्ठा कृष्ण चतुर्दशी 17 दिसम्बर
मूल कृष्ण अमावस्या 18 दिसम्बर	मूल शुक्ल प्रतिपदा 19 दिसम्बर	पूर्वाषाढ़ा शुक्ल द्वितीया 20 दिसम्बर	उत्तराषाढ़ा शुक्ल तृतीया 21 दिसम्बर	श्रवण शुक्ल चतुर्थी 22 दिसम्बर	धनिष्ठा शुक्ल पंचमी 23 दिसम्बर	शतभिषा शुक्ल षष्ठी 24 दिसम्बर
पूर्वाभाद्रपदा शुक्ल सप्तमी 25 दिसम्बर	उत्तराभाद्रपदा शुक्ल अष्टमी 26 दिसम्बर	रेवती शुक्ल नवमी 27 दिसम्बर	अश्विनी शुक्ल दशमी 28 दिसम्बर	भरणी शुक्ल एकादशी 29 दिसम्बर	कृतिका शुक्ल द्वादशी 30 दिसम्बर	रोहिणी शुक्ल त्रयोदशी 31 दिसम्बर
मृगशिरा शुक्ल चतुर्दशी 1 जनवरी	आर्द्रा शुक्ल पूर्णिमा / प्रतिपदा 2 जनवरी	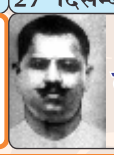 रामप्रसाद बिस्मिल बलिदान दिवस 19 दिसम्बर	स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस 23 दिसम्बर			

Rishi Dayanand - His Life And Work -Saroj Arya, Delhi

He would sweep the floor, wash his clothes and bring pitchers of water from Jamuna every day for the use of his preceptor. In spite of the fact that Virajanand was a man of hot temper and would go into wrath over trivial matters, Dayanand served him with filial love. Once he actually inflicted corporal punishment on Dayanand. The latter took it unmoved and addressed his guru as follows: "Sir, you should not put yourself to so much trouble on my account. My body is so hard that I am not likely to suffer much. But your hands, delicate as they are, must be feeling the exertion caused by it." The punishment left a scar on his body and in later life it brought to him happy recollections of a happy time passed with Virajanand. He took it as a the stamp of his guru's love.

At the feet of this blind Monk of Mathura, Dayanand sat for two years and a half, and drank deep at the source of spiritual learning. At last the parting day came. Virajanand told him that he had nothing more to give him. The disciple approached his teacher with half a seer cloves in his hands and begged permission to depart.

"My revered Guru, I have nothing else to give you, a poor Sanyasi as I am."

"And I shan't ask you for anything that you don't possess."

"Most holy Sir, whatever I have is at your disposal."

"Yes, you have acquired knowledge, go and disseminate it. Do away the darkness of ignorance which prevails. Wage a warfare against the false-hoods which have taken hold of the minds of your misguided brethren. They quarrel about castes and creeds and don't know the true knowledge of Vedas. They are being exploited in the name of religion not only by their own selfish brethren but also by propagator of foreign sects. The poor people of the country are being exploited in the name of spirituality, they are like slaves politically and mentally. Give them the message of the Vedic Religion. I want this pledge; give it if you are keen to pay my dakshina (A token gift in respect of teacher given by his pupil)."

The pledge, was solemnly given and no less solemnly left, as the coming pages will show. Sawami Dayanand left no stone unturned to fulfill the oath given by him to his Guru.

It did not take our hero long to enter upon the work entrusted to him by revered Guru. He did not accomplish much in the first four or five years, which rightly speaking, may be called years of preparation for the great struggle. In these years he assimilated what he had already learnt, and disciplined himself for the stupendous task that was ahead. The experience of these years changed him from a pure idealist to a practical reformer who knows the task he had to do and the stern realities he has to face.

After taking leave of his Guru, Dayanand started visiting the important towns of the united Provinces, From Mathura he went to Agra where he delivered lectures condemning idolatry and other practices which he considered to be evil. In 1865, he proceeded to Gwalior where the Maharaja had ordered a Saptahika or seven day's Katha, Dayanad objected this action of Maharaja.

To be continued...

द्विदिवसीय आर्य/आर्या प्रशिक्षण के बाद सत्रार्थियों के अनुभव

मेरा इस दो दिन के सत्र का अनुभव बड़ा अनूठा रहा। यहाँ आकर मुझे आर्य व उनसे जुड़े सवालों के सही जबाव मिले, जिनको आज तक इतिहास में हम गलत पढ़ते आए हैं। मुझे पता चला कि हकीकत में मैं आर्य ही हूँ परन्तु अज्ञानता व जानकारी के अभाव में हम जाति-वर्ग में बंटकर अलग हो गये हैं। परन्तु इस सत्र के बाद मैं आज से श्रेष्ठ (आर्य) हो गया हूँ। मैं जाति-वर्ण से ऊपर उठकर आज सर्वप्रथम मैं आर्य हूँ। मैं क्षत्रिय सभा से जुड़ना चाहुँगा।

नामः गुरप्रीत सिंह, आयु : 32 वर्ष, योग्यताः बी.ए.डी.बी., कार्यः वकील, पताः असन्ध, करनाल, हरियाणा

मुझे इस सत्र से बहुत अच्छा अनुभव हुआ। इस सत्र में बैठने से पहले मन में यह इच्छा थी की ईश्वर सब मूर्ति में ही होता है, पर मैंने यह जान लिया है कि ईश्वर सब जगह सर्वज्ञ, चेतन, सर्वव्यापक, निराकार होता है। मेरे मन का यह भय दूर हो गया। अब मैं पूरे विश्वास के साथ इस आर्य पथ पर चलूँगी। अब में व्यवस्थापक के रूप में कार्य करूंगी।

नामः सीमा, आयुः 29 वर्ष, योग्यताः एम. ए. (हिन्दी), गांगरोली, सहारनपुर,

---

मैं सत्र में आने से पहले अपने देश के बारे में इतना नहीं जानता था। अभी मुझे बाहर देशों के बारे में ही ज्यादा सुनने को मिलता था। यहाँ आकर पता चला कि हम क्या थे और गुलामी की वजह से क्या बना दिया गया। ब्रह्मचर्य के बारे में पता चला कि कैसे इसका पालन किया जाये और क्या इसका लाभ मिलता है। और देश की स्थिति को जानने को मिला कि वर्त्तमान में क्या चल रहा है।

नामः जितेन्द्र, आयुः 25 वर्ष, योग्यताः हाईस्कूल, पताः सद्धार्थ विहार, गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश

I feel to be proud as I know who is an Arya and to know my roots that I am also an Arya. I really have a strong determination that as Acharya ji said- I will follow rules of arya's and I will be an arya by virtue, deeds and temperament .

As per my strength & power I will try to help the poor and help to spread the message of Veda's- that all have to be Aryas.

Name : Prince Tyagi, Age : 28 years, Education : P.G. Biology, Address: Mujjafar Nagar, U.P.

आर्य परिवार सम्मेलन मोदी नगर व फरीदाबाद

आर्य निर्माणशाला में विभिन्न स्थानों पर निर्मात्री सभा के आचार्यों द्वारा आर्य व आर्या निर्माण

स्वामी व प्रकाशक आचार्य हनुमत्प्रसाद द्वारा सांगोपांगवेद विद्यापीठ, आर्ष गुरुकुल, टटेसर-जौन्ती, दिल्ली-81 से प्रकाशित

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् - समाचार पत्र मे छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक का पूर्णतया सहमत होना आवश्यक नहीं है। क्योंकि अनवधानतावश त्रुटि एवं मतभिन्न होना सम्भव है। सभी न्यायिक विवाद दिल्ली में निपटाये जाएंगे।